जनसत्ता

संकट और साख

भारत की न्यायपालिका गंभीर संकट में है। यह संकट उसकी साख और विश्वसनीयता को लेकर उठा है। मामला ज्यादा चिंताजनक इसलिए है कि देश के आम नागरिक से लेकर खास, अमीर-गरीब और सत्ता प्रतिष्ठान, सबके लिए न्याय की अंतिम आस सुप्रीम कोर्ट से रहती है। यहां से जो विधि-सम्मत न्याय मिलता है, वही अंतिम माना जाता है और संदेह से परे होता है। इसलिए अगर न्याय के इस मंदिर के बारे में ऐसी बातें सुनाई देने लगें जो आमजन के भीतर इसकी विश्वसनीयता को लेकर संदेह पैदा करने वाली हों, छवि को धूमिल करने वाली हों और न्याय करने वाले माननीय न्यायाधीश गंभीर आरोपों में घिरने में लगें, तो लोकतंत्र के इस महत्त्वपूर्ण स्तंभ के लिए इससे ज्यादा बुरा कुछ नहीं हो सकता। चिंता की यही ध्वनियां माननीय न्यायाधीशों की ओर से आ रही हैं। इसीलिए अदालत को उन लोगों को चेताने को मजबूर होना पड़ा है जो सर्वोच्च न्यायपालिका को बदनाम करने का षड्यंत्र कर रहे हैं। पिछले हफ्ते देश के प्रधान न्यायाधीश पर सुप्रीम कोर्ट की एक पूर्व कर्मचारी ने अमर्यादित आचरण करने का आरोप लगा कर सबको सकते में डाल दिया था। इस आरोप की जांच तीन जजों की एक कमेटी कर रही है।

लेकिन प्रधान न्यायाधीश पर ऐसे आरोप के बाद जिस तरह के घटनाक्रम बने और बातें सामने आईं, वे कहीं ज्यादा चिंताजनक और हैरान करने वाली हैं। एक वकील के इस दावे से कि प्रधान न्यायाधीश पर लगे आरोप के पीछे बड़ी साजिश और फिक्सर कॉरपोरेट लॉबी काम कर रही है, सब सन्न रह गए। इसीलिए सर्वोच्च न्यायालय ने इस वकील के आरोपों और दावों की जांच के लिए तत्काल सुप्रीम कोर्ट के ही पूर्व न्यायाधीश एके पटनायक को इसकी जांच सौंप दी। साथ ही सर्वोच्च अदालत ने सीबीआइ, खुफिया ब्यूरो (आइबी) और दिल्ली पुलिस के प्रमुख को इस जांच में न्यायमूर्ति पटनायक के साथ मदद करने को कहा गया है। साख को बचाने के लिए न्यायपालिका को आरोपों की तह तक जाना जरूरी है ताकि सच्चाई सामने आ सके और साजिश करने वालों का पर्दाफाश हो सके। प्रधान न्यायाधीश पर लगे आरोपों से ज्यादा कहीं गंभीर बात तो यह है कि न्याय के इस पवित्र और सर्वोच्च संस्थान को बाहर से नियंत्रित करने के प्रयासों की बातें सामने आ रही हैं। जांच में भले ऐसे आरोप बेबुनियाद निकलें, लेकिन तत्काल देश की जनता के भीतर न्यायपालिका को लेकर जो संदेह पैदा हुए होंगे, उन्हें आसानी से दूर नहीं किया जा सकता।

अपने ऊपर आरोप लगने के बाद प्रधान न्यायाधीश ने साफ कहा था कि वे कुछ महत्त्वपूर्ण मामलों की सुनवाई करने वाले हैं और इस तरह के आरोप उन पर दबाव बनाने के लिए लगाए गए हैं। न्यायपालिका की स्वतंत्रता को प्रभावित करने वाले ऐसे मामले पहले भी सामने आए हैं जब न्यायाधीशों को भारी दबाव का सामना करना पड़ा है, लेकिन वे इन दबावों के आगे झुके नहीं। पिछले साल जनवरी में सुप्रीम कोर्ट के चार जजों ने सार्वजनिक रूप से प्रधान न्यायाधीश पर जो आरोप लगाए थे, उनमें एक बड़ा आरोप रोस्टर को लेकर था। तब प्रधान न्यायाधीश पर कुछ खास मुकदमों को अपने पास रखने और परंपरा के विपरीत काम करने का आरोप लगा था। हालांकि अभी तक इन आरोपों की सच्चाई सामने नहीं आई है। इसलिए अगर अब फिर से ऐसे आरोप लग रहे हैं कि सुप्रीम कोर्ट में फिक्सरों की भूमिका है, तो इससे न्यायपालिका के प्रति अविश्वास पैदा होगा। कुछ महीनों पहले सीबीआइ में जिस तरह का घमासान मचा, उससे जांच एजेंसी की साख को भारी बट्टा लगा। अगर न्यायपालिका और जांच एजेंसियों की आजादी पर इस तरह से हमले होंगे और इनकी विश्वसनीयता को लेकर लोगों के मन में शक पैदा किया जाएगा तो ये संस्थान कैसे बचेंगे और लोकतंत्र में अपनी भूमिका निभाएंगे!

अवैध की जब्ती

आमतौर पर हर चुनाव में अलग-अलग पार्टियों की ओर से मतदाताओं के वोट हासिल करने के मकसद से पैसे देकर या दूसरी सुविधाओं का लाभ पहुंचा कर उन्हें लुभाने के मामले सामने आते रहते हैं। यह एक तरह से स्वच्छ और निष्पक्ष मतदान को प्रभावित करने की कवायद है और इससे आखिरकार लोकतांत्रिक प्रक्रिया बाधित होती है। हालांकि चुनावों के दौरान चुनाव आयोग अपनी ओर से इस तरह की संदिग्ध गतिविधियों पर नजर रखता है और ऐसा करने वालों के पकड़े जाने पर कार्रवाई भी करता है। फिर भी ऐसे मामले आम हैं कि कानून के कठघरे में खड़े होने के डर से बेफिक्र राजनीतिक दल चुनावों में बेलगाम खर्च और भ्रष्ट धन का सहारा लेने से नहीं चूकते हैं। जहां तक फिलहाल जारी सत्रहवीं लोकसभा के चुनावों का सवाल है, अब तक इसके तीन चरण पूरे हो चुके हैं और इस तरह के कई मामले पकड़ में आए हैं। चुनाव आयोग की ओर से मुहैया कराई गई जानकारी के मुताबिक चुनावों के दौरान 24 अप्रैल तक अलग-अलग जगहों पर की गई छापेमारी में करीब साढ़े सात सौ करोड़ रुपए नकद और लगभग बारह सौ करोड़ रुपए के मादक द्रव्य जब्त किए गए हैं।

यह अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं है कि अवैध तरीके से कहीं रखी गई या ले जाई रही इतनी बड़ी रकम का इस्तेमाल या तो वोट हासिल करने के लिए गलत तरीके से मतदाताओं को प्रभावित करने में होता या फिर उनका उपयोग कानूनी दायरे में नहीं था। इसी तरह एक साथ इतने बड़े पैमाने पर मादक द्रव्यों की जब्ती भी ऐसी ही आशंका को मजबूत करती है। यह किसी से छिपा नहीं है कि चुनावों के दौरान कई उम्मीदवार मतदाताओं को लुभाने के लिए उनके बीच मुफ्त में कुछ सामान या फिर सीधे नकदी ही बांटते हैं। मतदान के एक दिन पहले शराब बांटे जाने के भी मामले सामने आते रहते हैं। इन गतिविधियों का मकसद सिर्फ एक हो सकता है कि किसी भी तरह वोटरों को अपनी ओर लुभाया जा सके। यों अगर कोई राजनीतिक दल अपनी पार्टी की नीतियों और देश में जरूरी मुद्दों पर हस्तक्षेप करके लोगों की मुश्किल और समस्याओं के हल का वादा कर-के उनके वोट मांगता है तो इसमें कोई हर्ज नहीं है। लेकिन पैसे या शराब बांट कर उन्हें वोट देने के लिए लुभाने की कोशिश गैरकानूनी है और ऐसा करने वालों के खिलाफ चुनाव आयोग को सख्त कार्रवाई करनी चाहिए।

विडंबना यह है कि जो राजनीतिक दल या नेता ऐन मतदान के मौके पर आम मतदाताओं के वोट पैसे या मादक द्रव्यों के बूते खरीदना चाहते हैं, वही सामान्य दिनों में देश के लिए महत्त्वपूर्ण साबित होने वाले मुद्दों पर अपनी राय का प्रसार करने की जरूरत नहीं समझते, ताकि लोगों को सोच-समझ कर अपने पक्ष में वोट देने के लिए जागरूक किया जा सके। बल्कि कई बार ऐसा लगता है कि ज्यादातर राजनीतिक दल और नेताओं के पास वैसे नीतिगत मसलों पर कोई स्पष्ट राय नहीं होती, जिनसे आम जनता के जीवन पर सीधा असर पड़ता है। शायद यही वजह है कि देश में ऐसे लोगों की संख्या काफी है जो मतदान तो करते हैं, लेकिन उनके सामने देश की दशा और दिशा को समझने और उसके मुताबिक वोट देने का फैसला करने की स्थितियां नहीं होती हैं। जबकि लोकतंत्र की मजबूती के लिए जरूरी है कि एक ओर चुनावों में बहाए जाने वाले अवैध धन पर रोक लगाने के लिए हर उपाय किए जाने चाहिए तो दूसरी ओर मुद्दों पर ठोस और परिपक्व फैसला लेने के लिहाज से आम जनता के राजनीतिक सशक्तिकरण के उपाय भी किए जाएं।

कल्पमेधा

जो सचमुच प्रेम करता है उस मनुष्य का हृदय धरती पर साक्षात स्वर्ग है। ईश्वर उस मनुष्य में बसता है क्योंकि ईश्वर प्रेम है।

-लेमेन्नाइस

सवालों में घिरी उड्डयन नीति

संजीव पांडेय

हालांकि सरकार नागरिक उड्डयन को और विकसित करने के दावे करती रही है। छोटे-छोटे शहरों को भी हवाई सेवा से जोड़ने का दावा किया जा रहा है। देश के तमाम हिस्सों में एयरपोर्टों के विकास के लिए तमाम दावे किए जा रहे हैं। लेकिन सच्चाई यह है कि देश के कई हवाई अड्डों पर घने कोहरे में विमान उतारने के लिए अत्याधुनिक तकनीक नहीं है, जो पश्चिमी देशों के हवाई अड्डों पर उपलब्ध है।

जेट एयरवेज के संकट ने भारत के नागरिक उड्डयन क्षेत्र के तेजी से हो रहे विकास पर सवाल खड़ा कर दिया है। उड़ानें बंद करने के जेट एयरवेज के फैसले ने नागरिक उड्डयन नीति पर भी सवालिया निशान लगा दिया है। जेट एयरवेज पहली कंपनी नहीं है, जिसने अपनी हवाई सेवा बंद कर दी है। इससे पहले किंगफिशर और एयर डेक्कन को भी अपनी हवाई सेवाएं बंद करनी पड़ी थीं। एयर सहारा का भी बुरा हाल हुआ था, जिसे जेट एयरवेज ने खरीदा था। इसलिए सवाल सिर्फ एक विमानन कंपनी की उड़ानें बंद होने का नहीं है। सवाल भारत में नागरिक उड्डयन को लेकर बनाई गई नीति को लेकर भी है। आखिर यात्री संख्या में जोरदार बढ़ोतरी के बाद भी विमान कंपनियां घाटे में जा रही हैं, यह अहम सवाल है। घाटे में जाने वाली कंपनियों में सिर्फ निजी क्षेत्र की कंपनियां नहीं हैं, बल्कि सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनी एयर इंडिया का घाटा भी खासा बढ़ा है।

नब्बे के दशक के आर्थिक सुधार ने भारत में निजी एयरलाइन कंपनियों को अच्छा अवसर दिया था। धीरे-धीरे भारत में उड्डयन उद्योग यहां तक पहुंच गया कि सालाना दस करोड़ यात्री हवाई सफर करने लगे। आंकड़े बताते हैं कि 2018 में भारत में ग्यारह करोड़ यात्रियों ने हवाई सफर किया। इसका बड़ा हिस्सा निजी विमान कंपनियों को मिला। इसमें सबसे बड़ी हिस्सेदारी इंडिगो की थी। यात्रियों की बढ़ती संख्या निजी विमान कंपनियों के लिए काफी उत्साहवर्धक रही है, क्योंकि विमान कंपनियों को ये यात्री घरेलू रूटों पर ही मिले। साल 2000 में भारत में हवाई यात्रा करने वालों की संख्या लगभग डेढ़ करोड़ थी। पंद्रह सालों में यह संख्या सालाना दस करोड़ से उपर पहुंच गई। इसके बावजूद कुछ विमान कंपनियों का भट्ठा बैठता गया। यात्रियों की बढ़ती संख्या के बावजूद विमान कंपनियों का घाटे में जाना हैरान करने वाली घटना है। विमान कंपनियों का बंद होना कहीं न कहीं नागरिक उड्डयन क्षेत्र को लेकर बनाई गई नीतियों पर सवाल खड़े कर रहा है। इसके अलावा अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों ने भी भारतीय उड्डयन क्षेत्र को खासा नुकसान पहुंचाया।

पहले निजी एयरलाइन कंपनी एयर डेक्कन बंद हो गई। इसके बाद विजय माल्या की कंपनी किंगफिशर बंद हुई। अब जेट एयरवेज ने अपनी उड़ानें बंद कर दीं। दरअसल, ये कंपनियां हजारों करोड़ के कर्ज में डूब गई हैं और कर्ज चुकाने में नाकाम रही हैं। हालांकि इन कंपनियों को यात्री अच्छे मिल रहे थे। लेकिन विमानों की परिचालन लागत ने भी विमान कंपनियों को भारी नुकसान पहुंचाया। विमान के रखरखाव से लेकर तमाम खर्चों से कंपनियां दबती चली गईं, क्योंकि कंपनियां गलाकाट प्रतिस्पर्धा में लोगों को सस्ते से सस्ते टिकट देती रहीं। कंपनियों का रोना यही था कि बढ़ती परिचालन लागत और सस्ते किराए ने कंपनियों को मार दिया। हालांकि निजी विमान कंपनियों के प्रबंधन भी कंपनियों की माली हालत खराब होने के लिए जिम्मेवार हैं, लेकिन सरकार की नीतियों ने भी नागरिक उड्डयन क्षेत्र को भारी नुकसान पहुंचाया है, इससे इंकार नहीं किया जा सकता है।

नागरिक उड्डयन क्षेत्र में एकाधिकार खत्म करने की नीति भारत में 1990 के बाद लाई गई। लेकिन नागरिक उड्डयन क्षेत्र में असल क्रांति 2000 के बाद आई। हवाई जहाज आम लोगों की पहुंच में हो गया। 2003 में कैप्टन जीआर गोपीनाथ ने सस्ती विमान सेवा एयर डेक्कन शुरू की। इसके बाद कई और कंपनियां आईं। स्पाइस जेट, इंडिगो और गो एयर भी सस्ती विमान सेवा लेकर उतरीं। इन सारी निजी विमानन कंपनियों का कारोबारी मॉडल ज्यादा यात्री संख्या और सस्ते टिकट पर आधारित था। रेलगाड़ियों के वातानुकूलित कोचों में यात्रा करने वाले भी हवाई जहाज में उड़ने लगे। इससे विमान यात्रियों की संख्या में खासा इजाफा हुआ। पर जिस एयर डेक्कन ने सस्ती विमान सेवा शुरू की थी, उसकी आर्थिक स्थिति 2007 तक आते-आते खराब हो गई। खराब आर्थिक स्थिति के कारण एयर डेक्कन को किंगफिशर ने खरीद लिया। लेकिन तीन-चार साल बाद ही किंगफिशर की भी हालात खराब हो गई। 2012 तक आते-आते किंगफिशर कंगाल हो गई, इसके सारे विमान जमीन पर आ गए। अब यही हालत जेट एयरवेज की है। सार्वजनिक क्षेत्र की विमानन कंपनी एयर इंडिया का घाटा भी बढ़ता जा रहा है। इसकी हालत भी कोई अच्छी नहीं है। किसी तरह सरकारी समर्थन से यह अपने को बचाए रखने में अभी तक सफल है। पर

जेट एयरवेज, जिसकी यात्री बाजार में बयालीस फीसद तक हिस्सेदारी थी, उसकी बाजार हिस्सेदारी इस साल की शुरुआत में मात्र दस फीसद रह गई।

भारतीय मुद्रा यानी रुपए के डॉलर के मुकाबले लगातार कमजोर होने के कारण भी विमान कंपनियों को भारी नुकसान पहुंचा है। अपने कुल परिचालन खर्च का तीस फीसद तक विमान कंपनियों को भुगतान डॉलर में करना होता है। इसमें विमान का लीज किराया, जमीन पर होने वाले रखरखाव का खर्च, विदेशों में जाने वाले जहाजों की पार्किंग जैसे बड़े खर्च शामिल हैं। ये सारे भुगतान डॉलर में करने होते हैं। इसके अलावा विमान कंपनियों को पूरी दुनिया के मुकाबले सबसे ज्यादा ईंधन पर पैसे का भुगतान भारत में करना पड़ रहा है। भारत में विमान को दिए जाने वाले ईंधन (एटीएफ) पर भारी टैक्स लगाया जाता है। विमान को दिए जाने वाले ईंधन पर चौदह फीसद उत्पाद शुल्क और उनतीस फीसद बिक्री कर है। काफी लंबे समय से विमान कंपनियां मांग कर रही हैं कि विमान के ईंधन को जीएसटी के दायरे में लाया जाए। लेकिन सरकार ने इनकी मांगों को अनसुना कर दिया। विमान कंपनियों का तर्क रहा है कि वर्तमान में ईंधन को लेकर जो ढांचा सरकार ने लागू कर रखा है, वह विमान कंपनियों को भारी नुकसान पहुंचा रहा है। दुनिया के दूसरे देशों में विमान ईंधन पर टैक्स कम है और इस कारण ईंधन पर विमान कंपनियों को अपने कुल खर्च का सिर्फ बीस फीसद तक खर्च करना पड़ता है। पर भारत में कंपनियों को चालीस फीसद तक ईंधन पर खर्च करना पड़ता है।

हालांकि बीच में सरकार ने देश में संचालित होने वाले विशेष दर्जे की ट्रेनों में किराए के ढांचे में फेरबदल किया था। सरकार को उम्मीद थी कि इससे विमान कंपनियों को लाभ पहुंचेगा। हालांकि इससे रेलवे को भारी नुकसान हुआ। सरकार ने राजधानी एक्सप्रेस और शताब्दी एक्सप्रेस में फ्लैक्सी फेयर प्रणाली लागू कर दी। इससे इन ट्रेनों में यात्रा करना काफी महंगा हो गया। कई महत्त्वपूर्ण रूटों पर तो हवाई जहाज का किराया इन ट्रेनों के किराए के मुकाबले सस्ता हो गया। पहले, दूसरे और तीसरे दर्जे के वातानुकूलित कोच में सफर करने वाले लोग हवाई जहाज की तरफ रुख कर गए। निजी विमान कंपनियां इसका कितना लाभ उठा पाईं, इसका तो पता नहीं चल पाया। पर राजधानी और शताब्दी एक्सप्रेस ट्रेनों को फ्लैक्सी फेयर के कारण खासा नुकसान हो गया।

हालांकि सरकार नागरिक उड्डयन को और विकसित करने के दावे करती रही है। छोटे-छोटे शहरों को भी हवाई सेवा से जोड़ने का दावा किया जा रहा है। देश के तमाम हिस्सों में एयरपोर्टों के विकास के लिए तमाम दावे किए जा रहे हैं। लेकिन सच्चाई यह है कि देश के कई हवाई अड्डों पर भारी कोहरे में विमान उतारने के लिए अत्याधुनिक तकनीक नहीं है, जो पश्चिमी देशों के हवाई अड्डों पर उपलब्ध है। इस कारण कई विदेशी रूटों पर अंतराष्ट्रीय विमान सेवा शुरू करने में दिक्कत में आई है। जबकि सरकार ने कागजों में इन हवाई अड्डों को अंतराष्ट्रीय हवाई अड्डे का दर्जा दे दिया गया है। बताया जाता है कि दिल्ली में सक्रिय लॉबी देश के दूसरे हवाई अड्डों से अंतराष्ट्रीय विमान सेवाओं को सीधे शुरू किए जाने में लगातार बाधा बनती रही है। इस बाधा के कारण कई एयरपोर्टों को अत्याधुनिक तकनीक से लैस नहीं किया गया है।

तनाव के तार

कौशलेंद्र प्रपन्न

दुनिया मेरे आगे

किसी के भी जाने की न तिथि तय है और न विधि। शायद इसीलिए कहा जाता है हम सब अतिथि हैं। हमारा न आना तय है और न जाना ही। यानी हमें न अपने भविष्य के भूगोल का कुछ अता-पता है और न अतीत पर कोई नियंत्रण। अगर हम कुछ कर सकते हैं तो बस इतना कि वर्तमान को जिएं और बेहतर बनाएं। जब कभी कोई हमारे बीच से असमय चला जाता है तो एक बड़ी रिक्तता अपने पीछे छोड़ जाता है। एक ऐसी क्षति, जिसे शायद कोई भी भर नहीं सकता। कहने को कह सकते हैं कि कोई भी स्थान खाली नहीं रहता। कोई न कोई उस खालीपन को भर देता है। हमारे जीवन में हमारे बेहद प्रिय जब जाते हैं, तब हम उस क्षति की पूर्ति नहीं कर पाते। उसमें भी जब ऐसा व्यक्ति हो, जिसके जाने की अभी उम्र न हो। हालांकि यह तय करना भी हमारे हिस्से या हाथ में नहीं है कि कौन कब, कहां, कैसे जाएगा। हम जन्म कहीं और लेते हैं, पलते-बढ़ते कहीं और हैं, पढ़ाई-लिखाई और रोजगार कहीं और करते हैं। ऐसे में जहां रोटी मिलती है, वहीं के होकर रह जाते हैं। लेकिन ताउम्र हमें हमारी मिट्टी याद आती है। हालांकि बहुत कम लोग हैं जिन्हें उनकी इच्छा और चाह के अनुसार अपनी मातृभूमि मिल पाती है।

इस दुनिया में आना जितना पीड़ादायी प्रक्रिया से गुजरना होता है, उसके समांतर तनाव, चिंता, उद्वेलन भी काफी हैं। डॉक्टर बताते हैं कि गर्भ में पल रहा बच्चा तनाव में न हो। प्रसव के वक्त डॉक्टर कहते हैं कि जितनी मेहनत और कष्ट, प्रयास और तनाव मां सह लेती है, बच्चा भी उतनी भी भाव-प्रवणता के साथ तनाव में जी रहा होता है। अनुमान लगाना कठिन नहीं है इस दुनिया में आना भी तनावपूर्ण प्रक्रिया से गुजरना होता है। जब हम आ जाते हैं, तब फिर एक दूसरे किस्म की दुश्चिंताओं, तनावों, संघर्षों, संवेदनात्मक द्वंद्व से रोज रूबरू होना होता है। जो लोग विभिन्न तनावों, टकराहटों के बीच सामंजस्य स्थापित करने में कुशल होते हैं, वे काम के दबाव और तनाव से कैसे निकला जाए, इसे तय कर लेते हैं। जो लोग काम और दफ्तर, बॉस और कार्य दबावों को अपनी जिंदगी से विलगाने में सफल नहीं हो पाते, उन्हें अपने दफ्तर की छवियां रात-दिन परेशान करने लगती हैं। उन्हें समझ नहीं आता कि कब और कहां से एक स्पष्ट रेखा खींची जाए, जिसमें दफ्तरी काम और जीवन की अन्य प्राथमिकताओं को तवज्जो दी जाए। ऐसी ही स्थिति में व्यक्ति धीरे-धीरे चुप होने लगता है। वह अपने करीबी लोगों से भी कटता चला जाता है। एकाकीपन की जिंदगी उसे निराशा और कुंठा की ओर धकेलती चली जाती है। किससे अपनी बात कहे! इस चुनाव में वह और ज्यादा उलझता चला जाता है। एक वक्त ऐसा आता है, जब वह या तो हथियार डाल देता है या फिर उसका स्वास्थ्य उसका साथ छोड़ देता है।

हमारी दुनिया में कौन-कौन साथी हैं। किनसे हम अपनी बात कह सकते हैं। किन्हें चुन कर कुछ पल के लिए सहज महसूस कर सकते हैं, यह चुनाव करना अपने आप में बेहद कठिन काम है। उस पर दफ्तर में किसे अपनी निजी पीर बताएं, किससे अपने अंतर्जगत की हलचल साझा करें। यह बहुत दुविधापूर्ण होता है। हमेशा डर लगा रहता है कि कोई निजी कमजोरी का लाभ तो नहीं उठा लेगा। इस तरह का डर हमें दफ्तर में संकुचित करता चला जाता है। जहां हम मानते हैं कि अपने जीवन और दिन का एक बड़ा हिस्सा जिया करते हैं। जिनके बीच रहते, खाते-पीते हैं, लड़ते, मुंह फुलाया करते हैं, उन्हीं के बीच अगर तनाव में जी रहे हैं तो ऐसे में हमारी कार्यशैली और काम, काम को निर्धारित करने वाला व्यक्ति हमारे निजी जीवन को भी प्रभावित करने लगता है। काम का तनाव इस कदर प्रबल हो जाता है कि हम घर पर भी काम और बॉस की भाषा, उसके व्यवहार से परेशान रहते हैं। लक्ष्य और योजना हमारी जिंदगी हो जाती हैं। पीछे छूटती चली जाती है हमारी खुशी और शांति।

पैसे और आर्थिक पक्ष मजबूत करते-करते हम कब संवेदनात्मक तौर पर सतही होते जाते हैं, इसका अनुमान ही नहीं होता। काम के बाद भी काम की प्रकृति और कार्य संपन्न कराने वाले के भाव और भाषा हमें कोचने लगती है। कितना मुश्किल होता होगा उनके लिए जो बॉस और दफ्तर के दबाव तले अपनी सांसों का गला घोंट देते हैं। कह सकते हैं कि नौकरी हमारी जिंदगी को खाने लगे तो बेहतर है नौकरी बदल ली जाए। लेकिन सच्चाई से भी मुंह नहीं फेर सकते कि नौकरी पाना कितना कठिन है। प्रबंधन के जानकार मानते हैं कि कई बार लोग सक्षम कर्मी सिर्फ अपने बॉस या मैनेजर की वजह से परेशान होकर नौकरी छोड़ जाता है। इससे न केवल संस्था, कंपनी की हानि होती है, बल्कि हम अपने बीच से एक कुशल, दक्ष और संवेदनशील व्यक्ति को खो देते हैं।

विदेश में ईवीएम

ईवीएम में खोट निकालने वाले अक्सर तर्क देते हैं कि अमेरिका आदि विकसित देशों ने ईवीएम छोड़ कर बैलट से मतदान अपना लिया है और हमें भी ऐसा ही करना चाहिए। यह तर्क केवल एक अर्ध-सत्य है। पहली बात तो यह कि जिस ईवीएम को उन्होंने कुछ सीमा तक त्यागा (अमेरिका के कई राज्यों में अभी भी ईवीएम से ही मतदान होता है), वह भारत की ईवीएम से भिन्न है। वहां की ईवीएम नेटवर्क से जुड़ने योग्य थी, उसमें इंटरनेट से मत डाला जा सकता था, इस कारण उसे हैक किया जा सकता था। भारत की ईवीएम नेटवर्क-इनेबल्ड नहीं है। यह बहुत कुछ कैलकुलेटर जैसी चीज है, इसकी हैकिंग संभव ही नहीं है। यह सुप्रीम कोर्ट तक में सिद्ध हो चुका है। वास्तव में इसी विशेषता के कारण अनेक देश भारत के निर्वाचन आयोग से इन मशीनों के आयात का आदेश दे रहे हैं।

वैसे इंटरनेट लगी हुई ईवीएम भी चलन में हैं। स्विट्जरलैंड, जहां हर वर्ष राष्ट्रपति का चुनाव होता है और मुख्य राजनीतिक-प्रशासनिक मुद्दे जनमत-संग्रह द्वारा तय किए जाते हैं, वहां इंटरनेट वाली ईवीएम ही चलती हैं। लेकिन वहां आज तक कभी हैकिंग नहीं हुई। एस्टोनिया, जो 1991 तक सोवियत संघ का हिस्सा था, वहां भी इसी प्रकार नेट द्वारा मत डाले जाते हैं। अमेरिका के अलास्का प्रांत में फैक्स और वेब वोटिंग की सुविधा है। हवाई में ई-मेल से वोट डाल सकते हैं, इडाहो और उटाह प्रांतों में ई-मेल और फैक्स द्वारा वोट दिया जा सकता है। जहां केवल बैलट से मतदान होता है, ऐसे 18 राज्यों में गणना के लिए मतपत्र मेल से भेजे जाते हैं, अन्य राज्यों (कोलंबिया डिस्ट्रिक्ट सहित) में गणना के लिए मतपत्र ई-मेल, फैक्स अथवा वेबसाइट से भेजने का प्रावधान है; अर्थात बैलट प्रत्यक्ष भेजना नहीं पड़ता।

अगर मान लें कि ईवीएम से छेड़छाड़ हो सकती है, तो कड़वी हकीकत है कि बैलट और मतपेटी भी तो लूट लिए जाते थे। उसे कभी रोका नहीं जा सका था। ईवीएम ने ही उस पर विराम लगाया है। इसके अलावा बड़ी मात्रा में कागज और समय की बचत दो ऐसी बातें हैं, जो ईवीएम से ही संभव हैं।

● *पूनम मित्तल, मोहनपुरी, मेरठ*

धन प्रतिनिधि

चुनाव में पैसे लेकर टिकट देने का आरोप कई राजनीतिक दलों पर लगता रहा है। हाल ही में एक चुनाव सभा में एक कांग्रेसी नेता ने बसपा पर करोड़ों रुपए लेकर टिकट बेचने का आरोप लगाया। ये नेताजी पहले बसपा में ही थे। सवाल है कि इन आरोपों में कितनी सच्चाई है! क्या सच में राजनीतिक दल करोड़ों रुपयों के बदले में टिकट का सौदा करते हैं?

कहावत है कि बिना आग के धुआं नहीं होता है। यदि इसमें थोड़ी भी सच्चाई है तो यह हमारे देश के लिए अत्यंत घातक है। जो दल पैसों के बदले टिकट देने की सोच रखते हैं, क्या उनके हाथों में देश सुरक्षित रह सकेगा? दूसरी बात यह कि जो व्यक्ति करोड़ों रुपए देकर चुनाव लड़ेगा, चुनाव जीतने के बाद उसका सारा ध्यान तो किसी भी तरीके से अपनी तिजोरी भरने में ही लगा रहेगा। ऐसे में वह देश या समाज का कुछ भी भला नहीं कर सकता। हमें ऐसे नेताओं की पहचान कर उन्हें रोकना चाहिए।

● *बृजेश श्रीवास्तव, गाजियाबाद*

चुनावी वायदा

कांग्रेस अध्यक्ष ने घोषणा की है कि अगर उनकी पार्टी सत्ता में आई तो वे न्यूनतम आय गारंटी योजना के तहत पच्चीस करोड़ लोगों को गरीबी से बाहर निकालने के लिए उन्हें हर वर्ष बहत्तर हजार रुपए देंगे। पहली बात तो यह कि आजादी के सत्तर साल बाद भी देश की एक चौथाई आबादी गरीबी की रेखा से नीचे कैसे रही जबकि कांग्रेस स्वयं पचास साल तक सत्ता पर काबिज रही है? दूसरी बात, कांग्रेस अध्यक्ष की दादीजी ने 1971 में गरीबी हटाओ का नारा दिया था फिर भी गरीबी क्यों नहीं हटी? तीसरी और अहम बात यह कि जब कांग्रेस अध्यक्ष के पिताजी ने सत्ता संभालते ही देश को इक्कीसवीं शताब्दी में ले जाने और सुपर कंप्यूटर दिलाने की बात की थी, तब भी क्या उन्हें भारत की गरीबी दिखाई नहीं दी?

2004 से 2014 तक कांग्रेस केंद्र में लगातार दस वर्ष तक सत्ता में थी, तब यह गरीबी हटाने की बात क्यों नहीं सूझी? अब अचानक क्या कारण हुआ कि कांग्रेस अध्यक्ष को गरीबी हटाने की बात याद आ गई? मुद्दों की कंगाली से जूझ रही कांग्रेस पार्टी शायद जनता के टैक्स के पैसों को गरीबों में बांट कर सत्ता हथियाना चाहती है। लेकिन बहत्तर हजार रुपए वार्षिक देने से गरीबों की गरीबी मिट जाएगी ऐसा होना मुमकिन भी नहीं लगता क्योंकि छह हजार मासिक में गरीब खाएगा क्या और गरीबी दूर करने के उपाय करेगा क्या? देशवासियों की गरीबी दूर करने के लिए उनके लिए शिक्षा और रोजगारोन्मुखी कार्यक्रम पेश करने होंगे न कि मुफ्त में रुपए बांटने से यह होगा। अंत में बात यह कि कांग्रेस अध्यक्ष कहीं किसी की कोई गरीबी दूर करने वाले नहीं। यह महज वोट हासिल करने के लिए चुनावी चाल है।

● *सतप्रकाश सनोठिया, रोहिणी, दिल्ली*

साख का सवाल

विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के कंधों पर इस देश को संविधान सम्मत चलाने का दायित्व है। इन तीनों में से एक पर भी अगर आरोप लगते हैं तो समझिये इस देश में लोकतंत्र कलंकित होता है। सर्वोच्च अदालत में भी कुछ ऐसा ही खेल इस समय चल रहा है। न्यायपालिका के शीर्ष पद पर आसीन व्यक्ति पर एक महिला ने यौन शोषण का आरोप लगाया है। निश्चित रूप में किसी भी महिला का सम्मान सबसे अहम होता है। लिहाजा इस मामले में जांच और कार्रवाई जरूर होनी चाहिए। मगर महिला ने आरोप लगाने का जो तरीका चुना उससे कई सवाल खड़े होते हैं। मसलन, उसने आरोपों वाला शपथ पत्र सभी न्यायाधीशों के साथ-साथ मीडिया को भी जारी किया। इसका मतलब यह हुआ कि इस विषय को सनसनीखेज बनाने की दिलचस्पी ज्यादा दिखाई दे रही है। इससे पूर्व भी दो मुख्य न्यायाधीशें, न्यायमूर्ति जेएस खेहर और दीपक मिश्रा पर भी उंगली उठाने की कोशिश की गई थी। दीपक मिश्रा के मामले में तो महाभियोग चलाने की भी मांग उठी थी। यह साख का संकट है। यहां एक व्यक्ति पर हमला करके इस संस्था की साख को नुकसान पहुंचाया जा रहा है। उम्मीद है कि दो अलग-अलग जांच टीमों के गठन से मामले की तह तक पहुंचने में काबयाबी मिलेगी।

● *जंग बहादुर सिंह, गोलपहाड़ी, जमशेदपुर*

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com

नई दिल्ली